



Ancient Vedic Mantras and Rituals





Shrimad Bhagavad Gita Chapter-4 Shalok-12 | श्रीमद् भगवद्गीता अध्याय चार-श्लोक बारह | PDF

अध्याय 4 – ज्ञान कर्म संन्यास योग

श्लोक 12

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः ।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा ॥12॥

सरल हिंदी में भावार्थ

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—

हे अर्जुन! जो लोग अपने कर्मों की सफलता और उनके इच्छित फल की कामना करते हैं, वे इस संसार में विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं, क्योंकि मनुष्य लोक में कर्मों से उत्पन्न होने वाली सफलता शीघ्र प्राप्त हो जाती है।

विस्तृत व्याख्या

कर्मों की सफलता की इच्छा

इस श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण मनुष्य की उन इच्छाओं के बारे में बताते हैं, जिनके कारण वह विभिन्न देवताओं की उपासना करता है। अधिकांश लोग अपने जीवन में धन,



सफलता, पद, प्रतिष्ठा, संतान, स्वास्थ्य, सुख और अन्य सांसारिक उपलब्धियों की इच्छा रखते हैं।

जब व्यक्ति किसी विशेष कर्म के फल की कामना करता है, तब वह उस इच्छा की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार की पूजा और उपासना करता है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि ऐसे लोग मुख्य रूप से अपने कर्मों की **सिद्धि**, अर्थात् सफलता और इच्छित परिणाम की प्राप्ति चाहते हैं।

मनुष्य का मन प्रायः शीघ्र परिणाम चाहता है। इसलिए वह ऐसे कर्मों और उपासनाओं की ओर आकर्षित होता है, जिनसे उसे अपनी इच्छाओं की पूर्ति जल्दी होने की आशा दिखाई देती है।

“काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिम्” – कर्मों की सफलता की इच्छा रखने वाले

“काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिम्” का अर्थ है—जो लोग अपने कर्मों की सिद्धि या सफलता की इच्छा रखते हैं।

यहाँ कर्मों की सिद्धि का अर्थ केवल किसी कार्य को पूरा करना नहीं है, बल्कि उस कार्य से इच्छित परिणाम प्राप्त करना भी है। व्यक्ति व्यापार में सफलता, शिक्षा में उन्नति, धन की प्राप्ति, परिवार में सुख या किसी विशेष लक्ष्य की पूर्ति चाहता है।

ऐसी इच्छाओं से प्रेरित होकर मनुष्य कर्म करता है और उन कर्मों के फल की प्राप्ति के लिए उपासना भी करता है।

भगवान यहाँ मनुष्य की इस स्वाभाविक प्रवृत्ति को स्पष्ट कर रहे हैं कि अधिकांश लोग अपने प्रयासों के परिणाम को देखना



चाहते हैं। लेकिन जब कर्म केवल फल की इच्छा से किए जाते हैं, तब मनुष्य का मन उस फल से बंधा रहता है।

इसलिए गीता आगे चलकर यह शिक्षा देती है कि कर्म करना आवश्यक है, लेकिन कर्मफल के प्रति अत्यधिक आसक्ति व्यक्ति को बंधन में डाल सकती है।

“यजन्त इह देवताः” – लोग विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं श्लोक में भगवान कहते हैं कि कर्मों की सिद्धि की इच्छा रखने वाले लोग विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं।

मनुष्य अपनी अलग-अलग इच्छाओं और उद्देश्यों के अनुसार विभिन्न प्रकार की उपासना करता है। कोई धन की इच्छा से पूजा करता है, कोई स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करता है, कोई सफलता की कामना करता है और कोई अपने परिवार के सुख तथा सुरक्षा के लिए देवताओं की आराधना करता है।

इस प्रकार व्यक्ति की उपासना के पीछे उसका भाव और उद्देश्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण यह स्पष्ट करते हैं कि जब उपासना का मुख्य उद्देश्य किसी विशेष सांसारिक फल की प्राप्ति होता है, तब साधक का ध्यान मुख्य रूप से उसी फल पर केंद्रित रहता है।

लेकिन जब भक्ति प्रेम, श्रद्धा और भगवान के प्रति समर्पण के साथ की जाती है, तब उसका उद्देश्य केवल किसी अस्थायी लाभ की प्राप्ति नहीं रहता, बल्कि साधक की चेतना और जीवन की दिशा भी परिवर्तित होने लगती है।

“क्षिप्रं हि मानुषे लोके” – मनुष्य लोक में फल शीघ्र प्राप्त होते हैं



“क्षिप्रं हि मानुषे लोके” का अर्थ है—मनुष्य लोक में कर्मों से प्राप्त होने वाली सफलता शीघ्र प्राप्त हो सकती है।

मनुष्य जीवन कर्म करने का महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करता है। यहाँ व्यक्ति अपने विचारों, प्रयासों, निर्णयों और कर्मों के माध्यम से अपने जीवन की दिशा को प्रभावित कर सकता है।

जब व्यक्ति किसी लक्ष्य के लिए प्रयास करता है, उचित साधनों का उपयोग करता है और निरंतर कर्म करता है, तो उसे उसके कर्मों के अनुसार परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

यही कारण है कि सांसारिक इच्छाओं से प्रेरित व्यक्ति अपने कर्मों की सफलता के लिए विशेष प्रयास करता है और शीघ्र परिणाम प्राप्त करने की इच्छा रखता है।

लेकिन भगवान का संदेश यह भी समझने योग्य है कि संसार में मिलने वाली सफलता स्थायी नहीं होती। परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं, इच्छाएँ बदलती रहती हैं और कर्मों से मिलने वाले फल भी समय के साथ समाप्त हो सकते हैं।

इसलिए केवल अस्थायी सफलता को ही जीवन का अंतिम उद्देश्य नहीं मानना चाहिए।

“सिद्धिर्भवति कर्मजा” – कर्मों से उत्पन्न होने वाली सफलता

“सिद्धिर्भवति कर्मजा” का अर्थ है—कर्मों से उत्पन्न होने वाली सफलता प्राप्त होती है।

यह वाक्य मनुष्य को कर्म के महत्व का बोध कराता है। केवल इच्छा करने से किसी लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती। सफलता के लिए उचित कर्म, प्रयास, धैर्य और परिस्थितियों के अनुसार सही दिशा आवश्यक होती है।



मनुष्य अपने कर्मों के माध्यम से ही सांसारिक जीवन में अनेक उपलब्धियाँ प्राप्त करता है।

लेकिन गीता की शिक्षा केवल सफलता प्राप्त करने तक सीमित नहीं है। भगवान श्रीकृष्ण कर्म करने के साथ-साथ कर्म के प्रति सही दृष्टिकोण रखने की भी शिक्षा देते हैं।

यदि व्यक्ति कर्म को केवल व्यक्तिगत लाभ और फल की इच्छा से करता है, तो उसका मन सफलता और असफलता दोनों से प्रभावित होता है। सफलता मिलने पर अहंकार उत्पन्न हो सकता है और असफलता मिलने पर दुःख या निराशा।

इसके विपरीत, जब व्यक्ति अपने कर्तव्य को समझकर कर्म करता है और परिणाम को भगवान पर छोड़ देता है, तब उसके भीतर अधिक संतुलन और शांति उत्पन्न हो सकती है।

सांसारिक सफलता और आध्यात्मिक उन्नति

इस श्लोक का एक महत्वपूर्ण संदेश यह है कि सांसारिक सफलता और आध्यात्मिक उन्नति एक समान नहीं हैं।

कर्मों के द्वारा मनुष्य धन, प्रतिष्ठा, पद और अन्य सांसारिक उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकता है। लेकिन ये उपलब्धियाँ जीवन की बाहरी सफलता से संबंधित होती हैं।

आध्यात्मिक उन्नति के लिए मनुष्य को अपने भीतर भी परिवर्तन करना आवश्यक होता है। इसके लिए आत्मसंयम, ज्ञान, श्रद्धा, भक्ति, धर्मपूर्ण आचरण और निःस्वार्थ कर्म का महत्व है।

जब व्यक्ति केवल अपनी इच्छाओं की पूर्ति को ही जीवन का उद्देश्य मानता है, तब उसकी चेतना मुख्य रूप से बाहरी



उपलब्धियों तक सीमित रह सकती है।

लेकिन जब वह अपने कर्मों को एक उच्च उद्देश्य, धर्म और भगवान के प्रति समर्पण से जोड़ता है, तब वही कर्म उसके आंतरिक विकास का माध्यम बन सकते हैं।

इच्छा से प्रेरित कर्म और निःस्वार्थ कर्म

मनुष्य के अधिकांश कर्म किसी न किसी इच्छा से प्रेरित होते हैं। इच्छा व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है, लेकिन अत्यधिक आसक्ति मन को अशांत भी कर सकती है।

जब व्यक्ति केवल परिणाम को ध्यान में रखकर कर्म करता है, तो उसका सुख परिणाम पर निर्भर होने लगता है।

यदि इच्छित फल मिल जाए, तो प्रसन्नता होती है और यदि न मिले, तो दुःख उत्पन्न हो सकता है।

गीता निःस्वार्थ कर्म की शिक्षा देती है। इसका अर्थ कर्म को छोड़ देना नहीं है, बल्कि अपने कर्तव्य को पूरी निष्ठा से करना और फल के प्रति अत्यधिक आसक्ति से मुक्त रहने का प्रयास करना है।

निष्काम कर्म व्यक्ति को अपने कर्तव्य पर ध्यान केंद्रित करने और सफलता-असफलता में संतुलन बनाए रखने की प्रेरणा देता है।

पिछले श्लोक से संबंध

श्लोक 11 में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा कि जो लोग जिस प्रकार और जिस भाव से उनकी शरण ग्रहण करते हैं, भगवान भी उन्हें उसी के अनुसार स्वीकार करते हैं और मार्ग प्रदान करते हैं।



अब श्लोक 12 में भगवान बताते हैं कि जो लोग अपने कर्मों की सफलता और इच्छित फल की कामना करते हैं, वे विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं, क्योंकि मनुष्य लोक में कर्मों से उत्पन्न होने वाली सफलता शीघ्र प्राप्त हो सकती है।

इस प्रकार श्लोक 11 भगवान के प्रति व्यक्ति के भाव और समर्पण के सिद्धांत को स्पष्ट करता है, जबकि श्लोक 12 उन लोगों की प्रवृत्ति को बताता है जो मुख्य रूप से अपने कर्मों की सिद्धि और सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए उपासना करते हैं।

कर्म, उपासना और फल का संबंध

यह श्लोक कर्म, इच्छा और उपासना के बीच संबंध को समझाता है।

मनुष्य पहले किसी इच्छा या लक्ष्य को अपने मन में रखता है। उस इच्छा की पूर्ति के लिए वह कर्म करता है और कई बार सफलता प्राप्त करने के उद्देश्य से उपासना भी करता है।

इस प्रकार उसकी उपासना और कर्म दोनों किसी विशेष फल से जुड़े होते हैं।

लेकिन भगवान की शिक्षा यह है कि मनुष्य धीरे-धीरे अपनी चेतना को केवल व्यक्तिगत इच्छाओं तक सीमित न रखे। उसे अपने कर्मों को धर्म, सत्य और कर्तव्य के आधार पर करने का प्रयास करना चाहिए।

जब कर्म भगवान के प्रति समर्पण और निःस्वार्थ भाव से किए जाते हैं, तब कर्म केवल सांसारिक फल प्राप्त करने का साधन नहीं रहते, बल्कि वे व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास का



भी माध्यम बन सकते हैं।

मुख्य बिंदु

मनुष्य प्रायः अपने कर्मों की सफलता और इच्छित फल की कामना करता है।

सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए लोग विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं।

मनुष्य लोक में कर्मों से प्राप्त होने वाली सफलता अपेक्षाकृत शीघ्र मिल सकती है।

केवल इच्छा करने से सफलता प्राप्त नहीं होती, उसके लिए उचित कर्म और प्रयास आवश्यक हैं।

कर्मों से प्राप्त होने वाले सांसारिक फल स्थायी नहीं होते।

फल की अत्यधिक इच्छा व्यक्ति को सफलता और असफलता के साथ बाँध सकती है।

निःस्वार्थ भाव से किया गया कर्म मन की शांति और आध्यात्मिक उन्नति में सहायक होता है।

उपासना का उद्देश्य केवल सांसारिक लाभ तक सीमित नहीं होना चाहिए।

धर्म, कर्तव्य और भगवान के प्रति समर्पण के साथ किया गया कर्म जीवन को उच्च दिशा प्रदान करता है।

मनुष्य को कर्म करते हुए फल के प्रति अत्यधिक आसक्ति से बचने का प्रयास करना चाहिए।



गूढ आध्यात्मिक अर्थ

इस श्लोक का गहरा आध्यात्मिक अर्थ यह है कि मनुष्य की इच्छा उसके कर्मों और उपासना की दिशा को प्रभावित करती है।

जब व्यक्ति किसी विशेष सांसारिक फल की इच्छा रखता है, तो उसके कर्म, विचार और प्रार्थना उसी लक्ष्य के आसपास केंद्रित हो जाते हैं। वह सफलता, धन, प्रतिष्ठा या अन्य इच्छित उपलब्धियों की प्राप्ति के लिए प्रयास करता है।

लेकिन सांसारिक उपलब्धियाँ स्थायी नहीं होतीं। एक इच्छा पूरी होने के बाद मन में दूसरी इच्छा उत्पन्न हो सकती है। इस प्रकार इच्छाओं और कर्मफलों का चक्र चलता रहता है।

गीता मनुष्य को इस चक्र को समझने की प्रेरणा देती है। कर्म करना आवश्यक है, लेकिन केवल कर्मफल को ही जीवन का अंतिम लक्ष्य मान लेना मनुष्य को आंतरिक शांति नहीं दे सकता।

जब व्यक्ति धीरे-धीरे अपनी सीमित इच्छाओं से ऊपर उठकर अपने कर्मों को भगवान के प्रति समर्पित करने लगता है, तब उसके जीवन में एक गहरा परिवर्तन उत्पन्न हो सकता है।

“काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिम्” यह दर्शाता है कि अधिकांश लोग कर्मों के माध्यम से इच्छित परिणाम प्राप्त करना चाहते हैं।

“यजन्त इह देवताः” यह बताता है कि अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए लोग विभिन्न प्रकार की उपासना करते हैं।

“क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा” यह समझाता है



कि मनुष्य जीवन में कर्मों से उत्पन्न होने वाली सांसारिक सफलता प्राप्त हो सकती है, लेकिन ऐसी सफलता सीमित और परिवर्तनशील होती है।

इसलिए साधक को केवल बाहरी उपलब्धियों पर ही केंद्रित नहीं रहना चाहिए। उसे अपने मन, भाव और कर्मों को शुद्ध करने का प्रयास करना चाहिए।

पदों का भावार्थ

काङ्क्षन्तः – इच्छा रखने वाले, कामना करने वाले

कर्मणाम् – कर्मों की

सिद्धिम् – सफलता, सिद्धि या इच्छित फल

यजन्ते – पूजा करते हैं, आराधना करते हैं

इह – इस संसार में

देवताः – विभिन्न देवताओं की

क्षिप्रम् – शीघ्र, जल्दी

हि – क्योंकि, निश्चय ही

मानुषे – मनुष्य संबंधी, मनुष्य लोक में

लोके – संसार में, इस लोक में

सिद्धिः – सफलता, सिद्धि

भवति – होती है, प्राप्त होती है

कर्मजा – कर्मों से उत्पन्न होने वाली

श्लोक का संदेश

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो लोग अपने कर्मों की सफलता और इच्छित फल की कामना करते हैं, वे विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं, क्योंकि मनुष्य लोक में कर्मों से



उत्पन्न होने वाली सफलता शीघ्र प्राप्त हो सकती है।

यह श्लोक हमें सिखाता है कि सांसारिक इच्छाएँ मनुष्य को कर्म और उपासना की ओर प्रेरित करती हैं, लेकिन कर्मों से मिलने वाले फल स्थायी नहीं होते।

सच्चा कर्मयोग केवल सफलता प्राप्त करने के लिए कर्म करना नहीं है, बल्कि अपने कर्तव्य को धर्म, निष्ठा और समर्पण के साथ करना है।

जब व्यक्ति अपने कर्मों को भगवान को समर्पित करता है और फल के प्रति अत्यधिक आसक्ति से मुक्त होने का प्रयास करता है, तब उसका जीवन अधिक संतुलित और आध्यात्मिक दिशा की ओर बढ़ सकता है।

इस श्लोक का मुख्य संदेश है कि कर्मों से मिलने वाली सांसारिक सफलता अस्थायी हो सकती है, इसलिए मनुष्य को केवल फल की इच्छा में बंधने के बजाय अपने कर्मों को धर्म, निःस्वार्थ भाव और भगवान के प्रति समर्पण के साथ करना चाहिए।

Related Article



[Chapter-4 Shalok-10](#)



[Chapter-4 Shalok-11](#)



THANKS FOR READING



READ MORE RELIGIOUS
CONTENT ON



vedicprayers.com



Follow us on:

